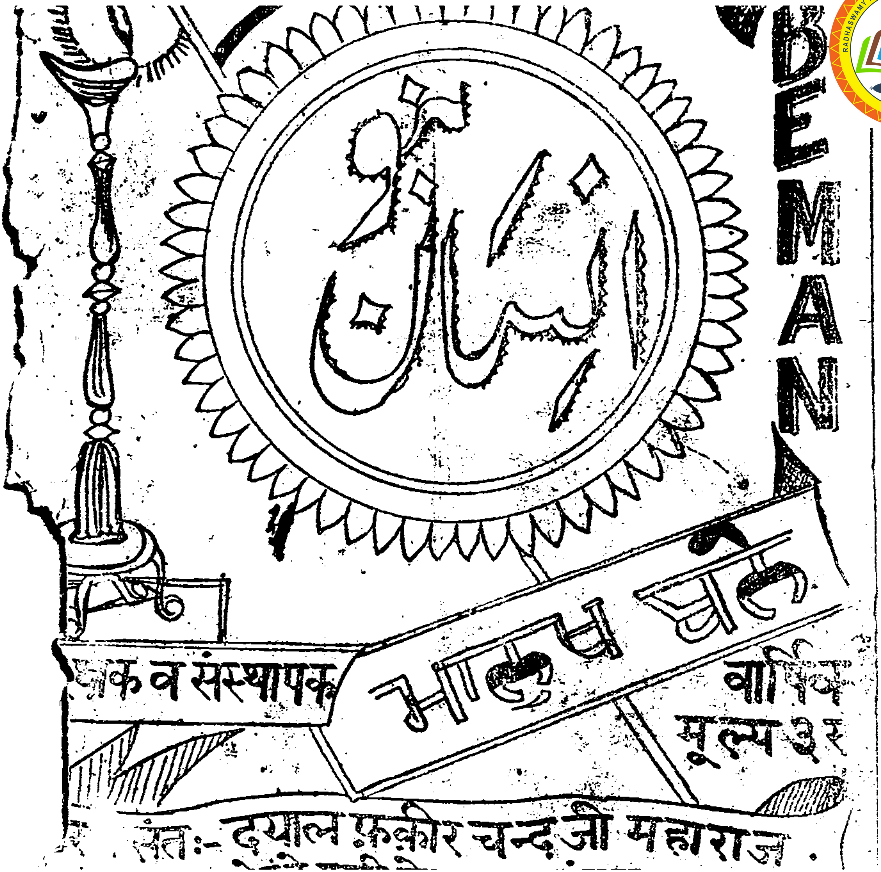
انسان
DEMAN
मानव धर्म
क व संस्थापक
वार्षिक
मूल्य 3 रु
संत:- दयाल फ़कीर चन्द जी महाराज

[परम दयाल फकीर साहब जी महाराज]

R.S.

मनुष्य बनो

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते ।
पूर्णस्यः पूर्णमादायः पूर्णमेवाव शिष्यते ॥

वर्ष १४ | अप्रैल सन् ६६ चैत्र-वैसाख सं-२०२३ | सं० ७/१६३

॥ सतगुरु उपकार ॥

कोई मानोरे कहन हमारी ॥ टेक ॥
जो जो कहूँ सुनो चित देकर । गौं की कहूं तुम्हारी ॥
जग के बीच बँधे तुम ऐसे । जैसे सुवना नलनी धारी ॥
मरकट सम तुम हुए अनाड़ी । मुट्ठी दीन फँसा री ॥
और मीना जिह्वा रसमाती । काँटा जिगर छिदा री ॥
गज सम मूरख हुए इस बनमें । झूठी हथिनी देख बँधा री ॥
क्या क्या कहूँ काल अन्याई । बहु बिधि तुमको फाँस लिया री ॥
तुम अनजान मर्म नहीं जाना । छलबल कर इन फाँस लिया री ॥
छूटन की बिधि नेंक न मानो । क्यों कर छूटन होय तुम्हारी ॥
सतगुरु संत हुए उपकारी । उनका संग करो न सम्हारी ॥
वह दयाल अस जुगत लखावें । चौरासी से दें छुटकारी ॥
पाँच तत्व गुन तीन जेवरी । कॉटें पल पल बँधन भारी ॥
उनकी संगत करो भर्म तज । पाओ तुम गति न्यारी ॥
जक्त जाल सब धोखा जानो । मन मूरख संग कीन्ही यारी ॥
इसका संग तजो तुम छिन छिन । नहिं यह लेगा जान तुम्हारी ॥
अपने घर से दूर पड़ोगे । चौरासी के धक्के खारी ॥
बड़ी कुगति में जाय पड़ोगे । वहां से तुमको कौन निकारी ॥
ताते अब ही कहना मानो । राधा स्वामी कहत विचारी ॥

अजामिल जी की कथा । ले०—दाता दयाल जी ।।

अजामिल जाति के कन्नौजिया ब्राह्मण और कन्नौज के रहने वाले थे । बुरी संगत में पड़कर बुरे काम करते थे । और भूल कर भी भगवान का नाम नहीं लेते थे ।

एक बार उस नगर में साधुओं की मंडली आई । और वह इस खोज में थी कि किसी भक्त का पता मिल जाये तो रात भर विश्राम करें । और प्रातः ही अपना मार्ग लें संसार में विभिन्न स्वभाव के व्यक्ति रहते हैं । हंसी ठट्टा करने वालों को अवसर मिल गया । इनसे कहा—"इस नगर में तो अजामिल ही बड़े प्रसिद्ध भक्त हैं । आप उनके घर जाइये, वह बड़ी सेवा सत्कार करेंगे । सीधे साधे साधुओं को क्या पता था कि उनके साथ हंसी ठट्टा की जा रही है । पूछते २ उनके घर पहुंचे । जिसने सुना उसी को आश्चर्य हुआ कि अजामिल कब से भक्त हुआ है । किन्तु उसमें भी गुप्त रहस्य मालिक की दया और अजामिल के सुधार का छुपा हुआ था । भली प्रकार नाम की महिमा सुना कर और पुत्र के जन्म पर नारायन नाम रखवा कर, उसके जाप से संसार सागर से पार होने तथा उद्धार का मार्ग बताया और वह तर गये ।

नाम का लो आसरा, और नाम का आधार ।
नाम के परताप से, हो जाये बेड़ा पार ।।
नाम में है सिद्धि शक्ति, नाम में उपकार ।
नाम के परताप से, होगा तुम्हारा सुधार ।।
नाम की महिमा बड़ी है, नाम अगम अपार ।
नाम के प्रताप ही से, छुटे कारा गार ।।
नाम लो दिन रात, कीजो नाम का व्यौहार ।
नाम के प्रताप से, तृय ताप होंगे छार ।।

राधा स्वामी नाम लेकर, मेंट दो संसार।
नाम के प्रताप से, भव से मिले छुटकारा॥

सतगुरु बन्दना। ले०—परमदयाल जी महाराज॥

आज मानवता मन्दिर में 'बन्दनम सत ज्ञान दाता का शब्द पढ़ा गया।' मैंने बड़े श्रद्धा, विश्वास, सच्चा भावना अति प्रेम से, दाता दयाल जी जोकि परम सन्त थे, उनका कृतज्ञ हूं। कृतज्ञता मानते समय अपने आपको योग्य नहीं समझता हूं। मेरी सुरत या मैं इस अपने मन जो महा मूर्ख, अज्ञानी, पतित, भृष्ट, भेद भाव, रखने वाला था, उसके वश में पड़ी हुई थी। आपके शुद्ध स्वरूप ने मुझसे खेल खिलाया और इस निर्वाण पद तथा ज्ञान पद की ओर जाने के लिये विवश किया। दाता ने लाहौर में सत्य ही कहा था कि फ़क़ीर तुममें ६६ दोष हैं परन्तु एक सत्य प्रिय होने के कारण केवल एक यह गुण ही तुमको लक्ष्य की प्राप्ति करा देगा। तुम मेरी आज्ञा मानो। मैंने आज्ञा का पालन किया और उनकी दया से आज मुझको वह सत्त ज्ञान प्राप्त हो गया। यद्यपि अभी पूर्ण रूपेण ज्ञान आरूढ़ नहीं हुआ। प्रार्थना करता हूँ ऐ दाता! जहाँ इतनी दया की है यदि कोई जन्म होता है तो मैं जन्म जन्मान्तरों से पता नहीं कब से इस मन के चक्कर में फँसा हुआ चला आ रहा हूं। अब दया करके सदैव के लिये इस मन से जो चौदह लोक का वासी है, निकल जाऊं।

चूँकि मुझे आदेश है जगत कल्लाण और निबल, अबल, अज्ञानी, जीवों के सहायक होने का, इसलिये उनके कल्याण हेतु कार्य करता हूं। कल परसराम ने कहा कि जब वह मेरे साथ इस बार दौरे में थे तो उनकी धर्मपत्नी आदमपुर में थी उसे प्रातः ही इतवार के दिन रेल से डाक्टर शादीलाल के

के साथ होशियारपुर आना था। प्रातः अँधेरा था, तो जब वह डरी तो वह कहती है कि मैं बाबा (फ़कीर) वहाँ प्रगट हुआ और उसको कहा किमैं तुझे स्टेशन छोड़े आता हूं। वह कहती है कि मैंने उसका हाथ पकड़ा और मार्ग में वार्तालाप करता हुआ उसे आदमपुर स्टेशन के प्लेटफार्म पर ले गया और कहा कि अब स्टेशन आ गया है मैं, जाता हूं। जब मैं दौरे से वापस आया तो परसराम की स्त्री ने उनसे कहा कि मैं बाबा जी से पूछूँगी कि आप तो कहते हैं कि हम कहीं नहीं जाते। मैं कैसे मानूँ जबकि मैंने आपको प्रत्यक्ष जागृत अवस्था में देखा, मार्ग में यात्रा की और वार्तालाप हुई।

मेरे सत्संग में (मुझे तो ज्ञात नहीं था कि उसका क्या प्रश्न था) किसी विषय पर मैं बात कर रहा था तो मैंने कहा था कि जिस प्रकार के संस्कार मानव के कारण मन पर पड़े हुए होते हैं वही रूप धारण कर समक्ष आते हैं। और उसकी इच्छा और आशा के अनुसार फल देते रहते हैं। इस प्रकार की अनेक घटनायें मेरे साथ होती रहती हैं। तो इस ज्ञान ने कि मैं तो कहीं जाता नहीं यह सब खेल मानव के अपने ही मन और आत्मा का है। इसने मुझे विवश कर दिया कि मैं इस काल रूपी मन और बुद्धि रूपी माया के जाल से निकल जाऊँ। चूँकि यह ज्ञान मुझको दाता दयाल जी के शुद्ध स्वरूप की दया से मिला है। उनकी बानी को मैं समझ नहीं सकता था और इतने स्पष्ट वर्णन से उन्होंने काम भी नहीं लिया था। और यदि लेते भी तो सम्भवतः मुझे विश्वास भी न होता। क्योंकि सन्त मत में साधारणतः एक विचार दिया गया है कि सन्त अपने आपको छुपाते हैं, प्रगट नहीं करते।

मैंने इस रहस्य को क्यों खोला ? यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि जीव अधिकारी नहीं है। समय से पूर्व यदि किसीको कोई

बात समझा दी भी जाय तो वह उसके लिए हानिकारक भी होती है। जिस प्रकार कि छोटी आयु के बच्चों को यदि स्त्री पुरुष के सम्बन्ध के विषय में ज्ञात हो जाय तो वह समय से पूर्व उस ज्ञान का साधन करने से हानि का कारण हो जाते हैं? और यदि भली भांति रहस्य बता दिया जाय तो लाभ भी है। इसलिये मैंने इस रहस्य को जन साधारण के लिये खोला है। क्योंकि मुझे जगत कल्याण का कर्तव्य सौंपा हुआ है। इसलिए मैं विवश हूँ। भारत वर्ष में जिस प्रकार भ्रम और अज्ञान के कारण धर्म और पन्थों का जाल बिछा हुआ है, उसके कारण जितना परस्पर द्वेष, ईर्षा, घृणा, भेदभाव आदि फैली हुई है उससे हानि हो रही है और अज्ञानी जीव अज्ञान वश लुटे जा रहे हैं। इसलिये मैं कहता हूँ कि ऐ भारत वासियो! तुम्हारे जितने धर्म, पन्थ, सम्प्रदाय और संस्थायें हैं, यह सब तुम्हारे अज्ञान, भ्रम और मूर्खता के बनाये हुये हैं। यदि तुम किसी सत ज्ञान दाता का सत्संग करते और तुमको ज्ञान हो जाता कि वास्तविकता क्या है। तो फिर इस संसार में रहते हुये यदि सांसारिक उन्नति चाहते हो तो अपने मन के शूक्ष्म और कारण रूप में कल्याण कारी इच्छायें, आशायें रखते तो तुमको जिस प्रकार कि इस स्त्री की सहायता हुई है, होती। इसी प्रकार तुम्हारे (Sub-Conscious Mind) में जिस प्रकार की कल्याणकारी आशायें होंगी उसी प्रकार का फल तुम को तुम्हारे जीवन में मिलता रहेगा। खेद है वाणी इस गूढ़ रहस्य और विषय को समझाने में असमर्थ है और मेरी सहायता नहीं करती। फिर भी मैं सत्संग का निमन्त्रण देता हूं। सत्संग करो, रेडियेशन और ध्यान का नियम तुम्हारी सहायता करेगा और तुम लोक और परलोक को बना सकोगे।

"भक्ति मुक्ति योग युक्ति, आपके आधीन सब ।
आप ही हैं सिन्धु सद्गति, जीव जन्तु मीन सब' ॥

बाह्य पूर्ण पुरुष जो माया तीत हो चुका है, जो कारण मन के चक्र से निकल चुका है, उसके सत्संग से क्या मिलता है ? यही कि भक्ति, मुक्ति, योग, युक्ति, सिद्धि, शक्ति, के संस्कार मिलते हैं । और वह संस्कार रेडियेशन के रूप में मानव के कारण मन के भीतर अंकित हो जाते हैं । और वही समय समय पर मानवीय जीवन में परिवर्तन लाते रहते हैं । इसलिये बाह्य दाता दयाल महर्षि जी की मैं इस शब्द द्वारा बन्दना करता हूं :—

'बन्दनम सत्त ज्ञान दाता, बन्दनम सत ज्ञान मय ।
बन्दनम निर्वाण दाता, बन्दनम निर्वाण मय ॥
आप गुरू सत गुरु दया, और प्रेम के भंडार हैं ।
आप कर्ता धर्ता हैं, कर्तार जगत आधार हैं ॥

अब मुझे निश्चय हो गया कि इस समस्त रचना का, सिद्धि-शक्ति का, मुक्ति निर्वाण का और जीवन बिताने के रहस्य का दाता कौन है ? वह है संस्कार रेडियेशन जो किसी पूरण पुरुष जो स्वयं प्रत्येक रूप से पूर्ण रूपेण है उससे मिलता है । इसलिये मेरी समझ में जो कुछ है वह पूर्ण पुरुष, पूर्ण धनी, कोई सत्पुरुष ही है । मुझको दाता दयाल जी की पवित्र-पुनीत-विभूति इस जन्म में मिली थी और मैं कृत्य-कृत्य हो गया । अभी मुझमें कुछ कमी है वह केवल इतनी ही कि बहुधा स्वप्न अवस्था में मैं भूल जाता हूँ कि यह स्वप्न है । और बस ।

ऋद्धि सिद्धि शक्ति नौनिद्धि, हैं चरण में आपके ।
बच गया भव दुख से, जो आया शरण में आपके ॥

मैं भव दुख से कैसे बचा ? केवल इस ज्ञान से कि यह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जितना खेल है ऋद्धि, सिद्धि, शक्ति नौनिद्धि, प्रेम, भक्ति, योग और विचार यह सब का सब भव है अर्थात् वह समस्त प्रकार के भाव, विचार और संस्कार हैं जो मेरे मस्तिष्क पर अथवा किसी के मस्तिष्क पर सुनने, छूने, देखने, पढ़ने और ब्रह्मांड के प्रभावों के लेने के कारण उत्पन्न होते हैं। उनसे मुझे यह ज्ञान हो गया। तो फिर यदि कोई इस भव के चक्र से निकलना चाहता है तो इस स्थूल, सूक्ष्म और कारण मन से परे जो सृष्टि का आदि शब्द है जब तक उसको न ग्रहण किया जायगा, तब तक भव के जाल से कोई निकल नहीं सकता है। इसलिये भव के जाल से निकालने के लिए नाम है। अन्तरी अनहद शब्द है। यही वास्तविक मुक्ति का दाता है। "सर्व रोग की दारू नाम" और यह संस्कार किसी पूर्ण, निर्बन्ध, वीतराग पुरुष, से ही मिल सकता है। जो स्वयं स्वार्थी, लालची और अज्ञानी है वह कैसे तुमको ऐसा विचार दे सकता है। यदि बाह्य रूप से देगा भी तो चूँकि उसकी अपनी रहनी ऐसी नहीं है उसकी रेडियेशन से लाभ न होगा।

भक्ति दीजे नाम की, सत नाम में विश्राम दे।
राधास्वामी अपना कीजे, राधास्वामी धाम दे॥

ऐ परम तत्व, सर्वाधार दाता दयाल! अब कृपा कर सदैव के लिये इस भव के जाल से निकाल दे। अपने मन की दशा पर जबकभी भी विचार करता हूँ तो बड़ालज्जित होता हूं। आपने जितना उपकार किया, भूल नहीं सकता। किन्तु पिछले जन्मों के बुरे व भले संस्कारों के कारण जो कुछ अशान्ति, चिन्ता, संशय, भ्रम सन्देह उत्पन्न हुये थे इस जीवन में वह भी अति दुःखदायी और सुखदायी दोनों ही रहे। अब शरणागतम्। जैसी मौज थी वैसा मुझसे करवा लिया। क्या पता मेरे इस स्पष्ट वर्णन का जनता पर क्या प्रभाव पड़े, मुझे ज्ञात नहीं। जो जो

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

स्कार मेरे मस्तिष्क पर आपके शुद्ध स्वरूप द्वारा पड़े उ स्कारों ने जो कराना था करा लिया और करा लेंगे

नोट—मेरे मिलने वालो, मेरे साहित्य को पढ़ने वालो यदि तुम्हारा अन्तःकरण और आत्मा मानती है कि मेरे इस कार्य से किसी का लाभ और भला हो सकता है तो इन विचारों पर स्वयं क्रियात्मिक रूप से साधन सम्पन्न होते हुये इन विचारों का प्रचार करो। मैंने अपनी नीयत से भारत वर्ष के धार्मिक मतभेद तथा भेदभाव और द्वेष को दूर करने को जो समझा है, के आधार पर प्रयत्न कर रहा हूं। साथ ही इस नीयत से कि यह अज्ञानी, भ्रमी मेरे जैसे उन्मत्त, जिनके अन्तर प्रगट तो उनकी अपनी वासना, संस्कार होते हैं, किन्तु यह अज्ञान वश यह समझकर कि कोई बाहर से राम, कृष्ण, बाबा फ़कीर या कोई महा पुरुष देवी देवता आया और वह उसके बदले रुपया, वस्त्र आदि मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुओं के समक्ष भेंट करते हैं। मुझे निबल, अबल और अज्ञानी जीवों के हित का कार्य सौंपा हुआ है और मौज ने मुझे इसलिये इस संसार में प्रगट किया है। मैं यदि पर्दा रखता तो एक बड़ा भारी महंत और गद्दीपति होता। मैं चाहता हूं संसार के सत्य प्रिय सज्जन इस सत्यता के प्रचार में मेरा हाथ बटायें जिससे कि संसार का वास्तविक और सच्चा कल्याण हो।

गज़ल पीरेमुगाँ साहब।

आये थे बहरे जहाँ में, हम न्हाने के लिये।
यह न समझो आये थे हम, गोता खाने के लिये।
तुमको देखा तुमतो गोते, खा रहे थे रात दिन।
हाथ फैलाया उसी दम, फिर बचाने के लिये॥
बच गये अच्छा हुआ, अच्छा हुआ तुम बच गये।
हम चले हैं राह अपनी, आये थे जाने के लिये॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

सैर दरिया हो चुकी, तैरे न्हाये चल बसे।
बदनसीब आया यहाँ, आँसू बहाने के लिये॥
मिल गये "पीरे मुगा", हमको दिया हक़ का प्याम।
भेस बदला तुमको यह, नुक्ता बताने के लिये॥

गज़ल (२)

गाओ बजाओ पीते फिरो, मस्ती की शराब।
बनते हो खूब बनते चलो, आज शेख़ो शाब॥
हम पीर दस्तगीर हैं, बैयत करोगे कल।
मग़रूर क्या दिखाते हो, तुम खोलकर किताब॥
हमने किताबें लिखके किया, पारा पारा सब।
अपनी समझ में आगया, इन सबका कुल हिसाब॥
दुनियाँ का बाग़ ताज़ा है, सैराब हर तरह।
हंसकर खिलो दिखाओ ज़रा, रंग चूँ गुलाब॥
हम में न बुग्ज़ो कीं है, न रश्को हसद ज़रा।
तुम माहीओ निहंग हो, हम क्या हैं? बहरे आब॥
हिन्दू हैं सिन्धू हम हैं, समन्दर की शक्ल में।
हम में न्हाओ धोओ कि, आजाये आबो ताब॥

पत्रोत्तर । (परमदयाल जी)॥

आज छोटे भाई राय साहब सुरेन्द्र नाथ जी का रजिस्ट्रड पत्र मिला।

वह लिखते हैं कि आप समय के संत सतगुरु होते हुए भी कैसे लिखते हैं कि धार नहीं आती। आदि आदि।

उनको उत्तर दे दिया गया। विचार आया कि संसार को इस रहस्य का अपने निज अनुभव के आधार पर वर्णन कर जाऊँ।

वह लिखते हैं कि उनके अन्तर दाता दयाल जी, मेरी या

भाई जी की धार आती है। उन्होंने ही ऐसा नहीं कहा अनेक महात्माओं ने ऐसा कहा और इसी कारण अपने पृथक पृथक डेरे, धाम, और धर्म-पन्थ बनाये। इसलाम धर्म के मुहम्मद साहब के साथ ख़ुदा बातें करता था। मेरे अन्तर भी दाता दयाल जी की धार आती थी। किसी के अन्तर राम, कृष्ण, प्रगट होकर बातें करते थे या करते हैं। प्रत्येक महापुरुष के अंतर जिस जिस प्रकार की धार आई, उसी के अनुसार उनका जीवन बना और वह अपना काम कर गये। महात्मा गांधी भी अपनी आन्तरिक ध्वनि को मानते थे।

मैं स्वयं इसी विचार का था। किन्तु मेरा अनुभव इसके विरुद्ध निकला। धार आती है। यह नहीं कि नहीं आती। किन्तु वह धार मानव के अपनी ही आत्मा की होती है। आत्मा जन्म लेता है। योनियों में आता है। इसलिए वह धार क्या है? वह है यह कि जिस जिस प्रकार के भाव, विचार वर्तमान परस्थितियों के अनुसार मानव के मस्तिष्क पर पड़ते हैं, वह अपनी ही प्रकृति के अनुसार उन दृश्यों को देखता है। यदि संकल्प शक्ति बलवान है तो कुछ समय तक उसकी विचार शक्ति कार्य करती है, फिर समाप्त हो जाती है।

मैंने भाई को लिखा कि तुम्हारा नाम दाता दयाल जी ने सुरेन्द्र नाथ रक्खा। तुम आत्मा हो। समस्त प्रकृति जिससे तुम्हारा शरीर, मन और आत्मा बना है वह तुम में विद्यमान है। यह धार तुम्हारी अपनी ही आत्मा की है न कि दाता-दयाल जी की, मेरी या भाई जी की। संभव है दाता दयाल जी की हो। मेरी नहीं होती। संभवत: निज़ामाबाद से भाई जी की आती हो। मुझे भाई के नाते उनकी इस दशा पर अत्यन्त खेद होता है।

मैं समय का संत सतगुरु हूं। डंके की चोट कह रहा हूं। मैं इस समय के लिये जिस सच्चे ज्ञान की आवश्यकता है, देता हूं। समय के संत सतगुरु के सुरखाब के पर नहीं लग जाते। केवल अपने जैसे उनमत्तों को शान्ती देने के लिये यह भेष धारण किया है।

मैंने पिछले लेखों में भी वह कारण वर्णन किये हैं कि यह धार बाहर से नहीं आती वरन् उन संस्कारों का परिणाम है जो मानव के मस्तिष्क पर पड़े होते हैं। लोगों के अंतर मेरा प्रकाशवान रूप प्रगट होकर उनकी सुरतों को ऊपर चढ़ा कर ले जाता है। जागृत अवस्था में वह मुझे देखते हैं। वार्तालाप करते हैं। स्वप्न में मेरा रूप उनके अंतर प्रगट होता है। औषधियां बताता है। मरते समय साथ ले जाता है। और आनन्द की बात यह है कि मैं नितांत अनभिज्ञ होता हूँ। संभव है दूसरों की धार जाती हो। मैं इस क्षण भंगुर जीवन में अपना त्रुटि पूर्ण आदर, मान, प्रतिष्ठा, धन, सम्पत्ति आदि नहीं लेना चाहता हूँ। प्रारब्ध कर्मों के कारण न जाने मैंने कितने जन्म लिये होंगे और अपने कर्मों का फल भोगता हूं। मैं अपने अन्त: करण को शुद्ध रखना चाहता हूं। न किसी के विरुद्ध न किसी के पक्ष में। यदि रेडियेशन के नियम को सच्चा न समझ पाता तो मैं यह सतसंग का कार्य करना एक महा पाप समझता।

वास्तव में यह समस्त खेल इस सोहं पुरुष जो Egoism अहम भाव तथा अहंकार का भंडार है, उसके कारण है। यह मानव का अपना आत्मा पूर्ण है। किन्तु जहां से यह निकलता है वह अवस्था सतलोक की है। यह राधा स्वामी मत, कबीर मत के अनुसार सोहं पुरुष, काल पुरुष है, जो संसार की रचना करता है।

वास्तविक और आदि स्थान सत पद है जो प्रकाश और शब्द का भंडार है।

जब तक किसी के अंतर यह धार आती रहती है और उसकी सुरत उन धारों को सत्य मान कर उनमें खेलती रहती है उसकी मुक्ति कदापि नहीं हो सकती है। यह जितनी धारें, भाव, विचार, दृश्य आदि हैं यह सब काल और माया के अंतर्गत हैं। राधास्वामी दयालजी की बाणी को पिछले अंक में पढ़ो :

देखो गगन के बीच शाम कंज खिल रहा।
भौंरा गया लुभाय वहीं जाके पिल रहा॥
धोखे का यह मुकाम उसे देखता रहा।
जो जो गये वहाँ उन्हें उल्टावता रहा॥

संत मत की शरण केवल शान्ति प्राप्त करने के लिये ली जाती है। इस संसार में इन आन्तरिक ध्वनि व धारों के फैलाव के कारण अनेक धर्म, पंथ, सम्प्रदाय बन गये और मानव जाति परस्पर बंट गई। यह समस्त खेल काल और माया का है। यह द्वन्द की रचना है। इसमें जीव अपने २ कर्मों के अनुसार अपना अपना कार्य करते हैं।

मेरा मा जाया भाई है। मैं सच्चे हृदय से चाहता हूँ कि दाता दयाल जी उसको शान्ति प्रदान करें और वह इस धर्म और पंथ के झमेले से निकल जाय।

गज़ल

अब फ़र्क़ क्या बताऊँ, फ़िराको विसाल में।
वह सामने नहीं हैं, मगर हैं ख़्याल में॥
ज़िक्र फ़िराक़ में कोई, फ़िक्र विसाल में।
देखो जिसे वह मस्त है, अपने ख़्याल में॥
इन्सां को चाहिये कि, न सोचे बुरी कभी।
रहती है होके बात, जो आई ख़्याल में॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

दुनियां में अहिले दर्द मौहब्बत के हैं वह ही।
जिनको खुशी का, लुत्फ़ है हासिल मलाल में ॥
अब सोचता हूँ क्यों, न मैं क़दमों पै गिर पड़ा।
इतनी सी बात और, न आई ख्याल में ॥

किसी को दिल पै है क़ाबू तो उसने ज़ब्त किया।
किसी को रब्त किसी का है उसने रब्त किया।
हमें है ख़ब्त हम इस ख़ब्त को समझते हैं।
हुए जो ख़ब्ती तो इस ख़ब्त का भी ख़ब्त किया॥

गज़ल

यह मस्जिद मन्दर बुतख़ाने को, यह जाने कोई वह जाने।
हैं तेरे हज़ारों काशाने, कोई यह जाने कोई वह जाने॥
कहता है कोई फ़ुरक़त अच्छी, कहता हैं कोई वस्ल अच्छा है।
कोई वह जाने कोई यह जाने, कोई यह जाने कोई वह जाने॥
कुछ इश्क़ को अच्छा कहते हैं, कुछ इश्क़ को बेला कहते हैं।
मन्सूबे ग़रज़ हैं मन माने, कोई यह जाने कोई वह जाने॥
बे नामो निशां क्यों रहता है, नज़रों से निहाँ क्यों रहता है।
बे समझे बूझे पहिचाने, कोई यह जाने कोई वह जाने॥
तू एक है और हर दिलमें है, क्या जानती है दुनियां तुझको।
फिर क्यों यह लड़ाई झगड़े हैं, कोई यह जाने कोई वह जाने॥
क्यों दैरो हरम में फिरता है. जा मिल किसी आमिल कामिल से।
वह राज़े हक़ीक़त देगा बता, फिर रूह को हुआ यह क्या जाने॥
पहिचान गया जब ज़ात को तू, दुनिया में रह दुनियाँ का न हो।
दुनियाँ इसको क्या जाने, कोई यह जाने कोई वह जाने॥

मैंने इन्सां को बनाया इसलिये। मेरे हुक्मों की वह पाबन्दी करे॥
सब में फ़ायक़ सब में लायक़ है बशर।
उसको मेरी हिकमतों की है ख़बर॥
आदमी में आदमियत चाहिये। आदमियत गर नहीं हैवान है॥

अ.क्ल हो बारीक बीं हो तमीज़ ।
और मोहब्बत से वह हो सब का अज़ीज़ ॥
आदमी की आदमियत का निशान ।
यह है बाकी मसखरापन उसको जान ॥

समय के संत सतगुरु । (लेखक परमदयाल जी)

आज सतसंग में यह शब्द पढ़ा गया:—

ज्ञान दीजे ज्ञान दाता, ज्ञान के भंडार से ।
सहज छुटकारा मिले, सबको कठिन संसार से ॥
कहने को तो बन्ध मुक्ती, कल्पना मन के सही ।
बिन दया सतगुरु के. वह मिटते नहीं हैं जीते जी ॥
नाम का दे आसरा, चरनों में अपने लीजिये ।
शब्द की महिमा बताकर, अपना सेवक कीजिये ॥
सच्दानन्दम् अखंडम् , केवलम् निज रूप हो ।
निज दया से जाय दुखदाई, महा भव कूप खो ॥
आपका है आसरा, और आपका विश्वास है ।
राधास्वामी तारिये, यह भी तुम्हारा दास है ॥

मैंने कर्म भोगवश, दाता दयाल जी के आदेशानुसार या मौजाधीन मानव जाति के कल्याण के हित के लिये अपने आप को समय का संत सतगुरु कहा है। अपनी आत्मा से पूछता हूं अरे फ़कीर ! क्या तू उन्मत्त हो गया है. तेरा मस्तिष्क ठीक है ? नहीं । मैं उन्मत्त नहीं हूँ । मस्तिष्क भी ठीक है। हां ! एक उन्मत्ता अवश्य है कि मेरे मन में मानव जाति की पीड़ा है । भारतवर्ष के धार्मिक मत भेद, भेद भाव, अज्ञान और कुमति, जिसके कि कारण हम घरेलू, मानसिक और देशीय रूप से दुखी हैं, का भान करता हूँ, तो सोचता हूँ, हम क्यों दुखी हैं ? वह इसलिये कि हम में भ्रम और अज्ञान है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

चूँकि इसमें मैं स्वयं ग्रस्त रहा हूँ। वह कैसे दूर हुआ ? उसके आधार पर मैं अपने कर्तव्य को जो दाता दयाल जी ने मुझे सौंपा है, कार्य करता हूं। यद्यपि मैं प्रतीत करता हूं कि यह काम मेरे ही कल्याण के लिये दिया गया था। मैं क्या कहना चाहता हूँ ? कल २० तारीख को सत्संग हुआ। डा० जगजीत सिंह (M. B. B. S.) टांडा वाले सत्संग में आये। उन्होंने कहा कि मेरी आज एक स्थान पर मीटिंग थी। किन्तु जब वह प्रातः साधन अभ्यास में बैठे तो कहते हैं कि मैं उनके अन्तर प्रगट हुआ और उनको कहा कि होशियारपुर, सत्संग में आ जाओ। ऐसी ही और भी अनेक घटनायें सत्संगियों की हैं उनको वर्णन करता हुआ आ रहा हूँ। मैं तो इनसे नितान्त अनभिज्ञ होता हूँ। मैंने उन डाक्टर साहब से कहा। फिर बात क्या है ? ऐसे-ऐसे अनेक प्रकार के भाव, विचार और दृश्य प्रत्येक धर्म, पंथ गद्दी वाले सज्जनों के अन्तर उत्पन्न होते रहते हैं। अनेक व्यक्तियों के अन्तर विशेष-विशेष प्रकार के भाव, विचार, तरंगें, बुराई या भलाई उत्पन्न होती रहती हैं और वह इनके अन्तरगत कार्य करते रहते हैं। ऐसा क्यों होता है ? मानव के मस्तिष्क में एक केन्द्र है जिसको चिदाकाश कहते हैं। उसके ऊपर प्रारब्ध कर्मों के अनुसार भी और इस जन्म के संस्कारों द्वारा भी जो संस्कार सुनकर, देखकर, पढ़कर, मस्तिष्क पर पड़ते हैं, उनका प्रतिबिम्ब विद्यमान रहता है। जिस समय मानव का मन जागृत और साधन या स्वप्नावस्था में एकाग्र होता है उस समय वह संस्कार आकृति बना कर विचार के रूप में उत्पन्न होते हैं। जीव चूँकि अज्ञानी हैं, वास्तविकता से अनभिज्ञ हैं, वह भाव विचारों को जो वास्तव में माया हैं, उनको सत्य मान कर उनके पीछे दौड़ते हैं और वैसा ही कर्म करने को विवश

हो जाते हैं। इस अज्ञान के कारण यह धर्म, पंथ, सम्प्रदाय गद्दियाँ बनी हुई हैं। और जीव बेचारे इस रहस्य को न जानते हुये कोई राम के गुण गाता है, कोई कृष्ण के, कोई हज़रत मुहम्मद, ईसा मसीह, गौतम बुद्ध, बाबा फ़कीर, राधा स्वामी दयाल, या दाता दयाल को अपने अन्तर प्रगट हुआ-हुआ, या विचारों को गति देने वाला समझ कर खेल खेलता है। उसके इस प्रकार के खेलों से उसको प्रसन्नता भी मिलती है और आनन्द भी। बहुधा सिद्धी-शक्ति भी आ जाती है और बहुधा इस प्रकार अज्ञान वश मानव पक्षपाती होकर परस्पर द्वेष, ईर्ष्या, घृणा और भेद भाव और मतभेद भी रखते हैं और नाना प्रकार के कार्य भी करते रहते हैं।

जितना भी यह खेल है। क्या है? काल और माया का खेल है। जब तक कि हमारी सुरत इस अपने मन के-चिदाकाश के चक्र के केन्द्र में है, वह इस संसार में रहता हुआ दुख-सुख, हानि-लाभ, जीवन-मरन, के झगड़ों से बच नहीं सकता। अधिकाँश व्यक्ति जानते हैं कि यह कल्पना है किन्तु फिर भी जानते हुये भी इस प्रकार के दृश्यों से बच नहीं सकते। जिस प्रकार कि यह डा० जगजीत सिंह जी शब्दाभ्यासी हैं, साधक हैं। मेरे शिष्य नहीं हैं। नाम किसी और स्थान से लिया हुआ है। किन्तु जब उनके अन्तर मेरा रूप प्रगट हुआ तब वह यह भूल गये कि यह माया थी। अपनी मीटिंग छोड़कर मेरे सत्संग में आ गये। इसलिये दातादयाल जी वर्णन करते हैं—

कहने को तो बंध मुक्ति, कल्पना मन के सही।
बिन दया सत्गुरु के वह, मिटते नहीं हैं जीते जी॥

मैं सतगुरु की स्थिति में मानव की इन कल्पनाओं को दूर करने का प्रयत्न करता हूं। मैंने अपने हृदय से इस रहस्य को समझाने के लिये, जिससे कि जीव सार भेद को समझें, यह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

खेल खेला है। यद्यपि संसार के प्राणियों को इस माया और काल के चक्र से निकलने की आवश्यकता का भान नहीं होता। चूंकि इस संसार में हम ऋणी हैं। हमारे सिर पर गुरु ऋण, मातृ ऋण, पितृ ऋण, राज्य ऋण है, इसलिए चूंकि दाता का आदेश था कि निबल, अबल, अज्ञानी जीवों की सहायता करना, जगत कल्याण के लिये कार्य करना। उस ऋण से मुक्त होने के लिये मैंने यह भेष बनाया है।

मुझे सचाई की खोज में, राम के मिलने की धुन में, एक वस्तु मिली है। इसका नाम है अनुभव, ज्ञान, समझ, सार भेद। कहावत है किसी स्त्री को एक अँगूठी मिल गई। जब उसकी अँगूठी को कोई देखता नहीं था तो उसने उस अँगूठी को दिखाने के लिये अपने घर में आग लगाई और फूँक दिया। और ढोलक लेकर रोती हुई गाती है कि मेरा सब घर बार जल गया, लुट गया। केवल यह एक अँगूठी शेष रह गई है। इसी प्रकार मैं अपने कर्म भोग वश, इस ७६ वर्ष की आयु में संसार के कटाक्षों को (कि यह वृद्ध अपने आपको समय का सन्त सतगुरु कहता है) सहन करता हुआ, इस सच्चे रहस्य, सार-भेद और सचाई को व्यक्त किये जा रहा हूं, जिससे कि भोले भाले अज्ञानी जीव जिनके अन्तर कोई गुरु, कोई राम, कोई कृष्ण, कोई देवी देवता, अथवा भाव-विचार उत्पन्न होता है और वह उन्मत्ता वश उसको सत्य मानकर, जो वास्तव में माया और काल का खेल है, लुट न जायें और फँस न जायें। इसी माया के चक्र में आकर मैं भी उन्मत्त हुआ था। दाता दयाल जी की कृतज्ञता है। उन्होंने मेरे जीवन को अनुभव करा कर, इस अज्ञान से निकाल दिया। अनेक मेरे इष्ट-मित्र, भाई बन्धु उन्मत्त होकर, कोई कहता है कि उसके अन्तर बाबा सावन सिंह जी प्रगट होकर बातें करते हैं कोई

कहता है कि दाता दयाल जी, किसीको गुरु बनने की लालसा है, कोई कुछ करता है, कोई कुछ करता है। आज मैं बड़ा भाग्य शाली मनुष्य हूँ जिसको राधास्वामी मत या संत मत की सच्ची शिक्षा का ज्ञान हुआ। और वह ज्ञान, ज्ञान के भंडार से संसार को देना चाहता हूँ। राधास्वामी मत में केवल जीवित पूर्ण पुरुष की आज्ञा को मानना है, न कि उन आदेशों को जो किसी प्राणी के अंतर उसके इष्ट का रूप धारण कर उसको बताता है वह अंतर के इष्ट का रूप जो कुछ कहेगा वह मानव अपनी ही इच्छाओं, वासनाओं और भाव, विचार जो उसके प्रारब्ध कर्मों के कारण या इस जीवन के बाह्य प्रभावों के कारण, इच्छायें उत्पन्न हुई हैं, उनके अनुसार होगा कभी वह सत्य भी होसकता है और कभी असत्य भी और कभी पथ भ्रष्ट करने वाला भी।

मेरे काम का ध्येय इतना है कि संसार मनमत होकर, धर्म की त्रुटि पूर्ण समझ के कारण भटका न खाये। और सही संस्कार किसी बाह्य सतपुरुष, पूर्ण पुरुष की संगत से लेकर अपने घरेलू, मानसिक और देशीय जीवन को श्रेष्ठ और प्रसन्नता पूर्वक विताने का प्रयत्न करे। और अपनी सुरत को मन के चिदाकाश से परे ले जाने का प्रयास करे। जिससे कि सदैव के लिये आवागमन का चक्र समाप्त हो जाये। और वह केवल शब्द, सत नाम, निज नाम से सम्बन्ध उत्पन्न करने पर होगा। न कि वह रूप, रंग, रेखा, दृश्य, आकृति जो उसके अंतर उसके इष्ट के रूप में प्रगट होती है, उसके साथ सम्बंध जोड़ने से। मैं जानता हूं कि मैं ऊँचा बोल रहा हूं। समझाने वाले भी नहीं और न उनको समझने की आवश्यकता ही है। किन्तु मुझे पूर्ण पुरुष, सत पुरुष, परम संत, दातादयाल महर्षि जी महाराज के शुद्ध स्वरूप का मौखिक और लिखित आदेश है। साथ ही हुज़ूर बाबा सावनसिंहजी महाराज की आज्ञा है

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कि मैं निबल, अबल और अज्ञानी जीवों के लिये कार्य करूँ, और साथ ही जगत कल्याण के लिये। इसलिये निर्भय होकर इस सचाई को व्यक्ति किये जा रहा हूँ और सत्य प्रिय जन, खोजियों और जिज्ञासुओं को सत्संग का निमंत्रण देता हूं।

सतगुरु कृतज्ञता। दयाल नन्दू भाई जी महाराज॥

अहसान बड़ा सतगुरु दाता, नन्दू को चरन लगाया है।
निज चरनों की प्रीत बख्श, अपने में आप ठहराया है॥
भक्ती का मारग दिखला कर, दुविधा मेंटी संशय मेंटा।
घट के पट खोल दिये झट से, अपने में तुझको पाया है॥
नहीं आना कहीं नहीं जाना कहीं,
आवागवन से अब छुटकारा मिला।
मति धीर भई बुद्धि स्थिर है, सत में सत ही को पाया है॥
बाकी जो दिन रह जाते हैं, तुम काटदो इन्हें हंस हंस कर।
बेफिक्री से जीवन बीते, यह परमारथ दिखलाया है॥
संतोष दिया सुख शान्ती का, जीवन को किया अभय तूने।
मिला सुबह शाम दर्शन घट में, यह सतगुरु की अब दाया है॥
अंतिम पद का दिया भेद हुजूर, इस पद में अंतिम दरसाया।
सब खोल खोल कर लिक्खा है, जो अनुभव में खुद आया है।
राधास्वामी दयाल दया करके, चरनों से लगाया अपने अब।
सब भूल भरम दुविधा मेंटी, नन्दू निज चरनों आया है॥
हम राधास्वामी के बालक हैं, घबराने से अब काम नहीं।
मुशकिल को आसाँ कर देंगे, चिन्ता और फिक्र का नाम नहीं॥
निश्चल निर्मल जीवन अपना, बेखौफ रहें निर्भय होकर।
सुमिरन और ध्यान से मतलब है, मायूसी का मनमें नाम नहीं॥
जिस हालत में रक्खे दाता, खुश रहना सब से काम मेरा।
हम मौज का जीवन जीते हैं, दुख दर्द का अब कुछ काम नहीं॥

विश्वास गुरू के चरनों का, शुभ संकल्प का मारग गह कर।
ख़ुश रहते हैं आनन्द में हैं, दुख दर्द से हम को काम नहीं॥
भक्ती का मारग प्रेम का है, क़ुरबान किया है तन मन धन।
चरनों में सुरत लगी सतगुरु, और उसे कोई ठाम नहीं॥
जो वस्ल गुरू का पाते हैं, गुरु उनमें रहें वह दूर नहीं।
तुम आप आप को पहिचानो, यूं कहने का दस्तूर नहीं॥
जब मुन्शी मुन्शी लाल हुए, सतगुरु का काम करो दिल से।
जब प्रेम प्रीत हृदय में है, फिर मुशकिल राधास्वामी धाम नहीं॥
जो राधास्वामी को भजते हैं, अंतर बाहर दर्शन करके।
है दया की बारिश उन पर ही, निष्काम हुए वह सकाम नहीं॥

मानव कल्याण। (लें०-परमदयाल जी महाराज)॥

नज़र आ रही है, वह हालत जल्द आयेगी।
जब यह ज़ाहिरी दुनियाँ, मुझे न नज़र आयेगी॥

फिर क्या होगा? इच्छा है बता सकूँ। अभी तक सब कुछ अनुमान ही है। अथवा प्राचीन महापुरुषों के सन्देशानुसार एक बात मस्तिष्क में विद्यमान है। उसके आधार पर प्रत्येक महापुरुष अपनी अपनी बात कह गया।

फिरा न मुल्के अदम से कोई कि मैं पूछूँ।
मुसाफ़िरो! कहो मंज़िल पै क्या गुज़रती है॥
उतते कोई न आईया, जा से पूछूँ जाय।
इतते ही सब जात हैं, भार लदाय लदाय॥

चूँकि दाता दयाल जी के संस्कार ने मुझे पूर्ण पुरुष (मुर्शिदे कामिल, संत सतगुरु का काम दिया है और संत कबीर पूर्ण पुरुष ने वर्णन किया है:—

उतते सतगुरु आईया, जाकी बुद्धि मति धीर।
भव सागर के जीव को, खेय लगावें तीर॥

वर्ष १४

जब हम इस संसार में आकर अपने भाव, विचार और कल्पनाओं के अन्तरगत बह कर, दुख-सुख, हर्ष-शोक, चिंता-अचिन्ता, भोगते हैं। और यह खेल या हमारा भोग भवसागर है। संतमत के अनुसार अलख लोक की सोपान से जब तक कोई बाहर नहीं होता, वह माया के जाल में है। अर्थात् वहाँ तक किसी न किसी प्रकार की चेतनता विद्यमान रहती है शारीरिक हो, मानसिक हो, या आत्मिक हो। दाता दयाल महर्षि जी के शुद्ध स्वरूप की कृतज्ञता है, जिन्होंने आचार्य पदवी देकर मुझे यह सिद्ध करा दिया कि जितनी भी चेतनतायें मानव के अन्तर हैं वह सब की सब प्राकृतिक हैं। जैसा इस प्रकृति ने किसी को बनाया है, वैसा ही खेल वह खेलता है और देखता है। इससे आगे क्या है ? न मैं न तू, न कर्ता न कारज, न ज़ात न सिफ़ात, न ब्रह्म न माया, न सत न असत। यह नहीं कि वहाँ कुछ नहीं। किन्तु चूँकि अलख के परे या हर प्रकार की चेतनता के परे जो वस्तु इन चेतनताओं का भान तथा अनुभव करती है वही नहीं रहती है। इसलिये आगे कुछ कहना सुनना समाप्त हो जाता है।

सुरत हुई अति कर मगनानी। पुरुष अनामी जाय समानी॥

मैं चेतनता की दशा में इतना कह सकता हूं कि जीवन क्या है ?

"लब खुले और बन्द हुए, यह राज़ जिन्दगानी निकला"।

इस अनुभव के आधार पर, चूँकि दाता दयाल जी के शुद्ध स्वरूप ने जगत कल्याण का काम दिया था, कहना चाहता हूँ:—

अरे इन्सान तू ख़ुदा के नाम पर, मत इन्सान की तक़सीम कर।
बल्कि बहतर है मज़हबों और, पंथों की तरमीम कर॥
ज़िन्दगी बनाई है किसी ने, बस उसको यक़ीन कर।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जिन्दा रह .खुशी से और, .खुश रहने की तल्क़ीन कर।
उसकी इबादत है यही कि हो, यक़ीन तेरा .ज़ात पर।
होश में रहते हुए इन्सान बन कर, इन्सान की इम्दाद कर॥
न.फ्स मन चंचल है इसको, थिर करने का यतन कर।
इसके लिये सुमिरन किया कर, ध्यान कर और भजन कर॥
हो सके तो दो घड़ी के वास्ते, सतसंग में जाना ज़रूर।
सौहबत न .खुदग़रज़, मक्कार, लालची इन्सान कर॥

सफलता की रागिनी।

हम हैं इन्सां अपनी इन्सानी न खोयेंगे कभी।
.खुश रहेंगे दर्द से ग़म से न रोयेंगे कभी॥
ज़ौफ़ो कमजोरी के शाकी क्यों बने हम जीते जी।
काम करके .ख्वाब ग़फ़लत में न सोयेंगे कभी॥
कौन से धब्बे हैं दिल का जिनसे दामन हो न साफ़।
यह न तुम समझो कि हम इनको न धोयेंगे कभी॥
मज़रये बातिन को पहिले करलें अपने पाक .खूब।
वक्त आयेगा तो तु.ख्म नेक बोयेंगे कभी॥
असलियत हम में है हम हक़ हैं हक़ीक़त .खुद हैं हम।
कामरानी से न हम महरूम होयेंगे कभी॥

बे ग़र.ज कोई नहीं आया यहां।
सबके आने की ग़रज़ है बे गुमां॥
हाथ आया काम करने के लिये।
पाँव आया राह चलने के लिये॥
देखती है आँख यह उसका है काम।
यह समझलो है ग़रज़ का सब में नाम॥
कान आया है यहाँ सुनने के लिये।
मन यहाँ आया है गुनने के लिये॥
नाम में भी है निशाँ का मुद्दआ। मुद्दआ, .खुद मुद्दआ है मुद्दआ॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

हिन्दू धर्म की त्रिमूर्ति व दस अवतार

ले० रा० सा० सुरेन्द्रनाथ

ब्रह्मा, विष्णु, महेश हिन्दू धर्म की त्रिमूर्तियां हैं।

यह ईश्वर की तीन विभिन्न शक्तियां हैं। यही सत् (सतो गुण) रज (रजो गुण) और तम् (तमो गुण) हैं। यही सत्-चित्-आनन्द और आदि, मध्य और अन्त हैं। सृष्टि स्थिति और लय का प्रबन्ध इन्हीं शक्तियों द्वारा होता है। ईश्वर सृष्टि रचने के कारण ब्रह्मा कहलाता है, पालन पोषण करने के कारण विष्णु कहलाता है और लय करने के कारण महेश कहलाता है। इसकी ये तीनों शक्तियाँ रचना के काम में प्रथक प्रथक कार्य करती हैं। प्रत्येक शक्ति का अपने गुण के विचार से प्रथक नाम पड़ा।

आदि में विष्णु भगवान ने ४ रूप धारण किये। मच्छ, कच्छ, विराह और नरसिंह। सर्व प्रथम बच्चा मछली के रूप में आता है। फिर वह कछुआ बनता है। ५ कर्मेन्द्रियाँ ५ ज्ञानेन्द्रियाँ और ४ अन्तःकरण: यह १४ रत्न उसे क्षीर सागर में दिये जाते हैं। फिर मल मूत्र में लिपटा हुआ वह माँ के पेट से बाहर निकलता है। शब्द प्रगट होता है। आत्मा को अपने निज स्वरूप का भान होने लगता है। बच्चा कुछ दिन खाट पर पड़ा रहता है। तत्पश्चात मानवीय सिर रखने हुये चारों हाथ पैरों से चलने लग जाता है। प्रत्येक की उत्पत्ति इसी प्रकार होती है। इसका उदाहरण विष्णु ने आप प्रगट होकर दिखाया और ब्रह्मा को बताया कि देखो कितनी सुन्दरता से मैं यह चित्र बना रहा हूं। ब्रह्मा देखकर प्रसन्न हुये।

यह चारों अवतार जिस समय हुये उस युग का नाम सतयुग था। इन चारों में बुद्धि का बल नहीं होता। चित् शक्ति नहीं उभरती। केवल सत् ही सत् रहता है। समस्त

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

कार्य ध्यान से होता है। ध्यान की शक्ति इस युग का धर्म है। इस अवतार में ध्यान से चारों हाथ पांव स्थित रहते हैं और इस युग में ध्यान के अतिरिक्त और कुछ नहीं रहता। जिसमें केवल सत् ही सत् हो। अचिन्ता हो दुख और कलह क्लेश न हो वह सतयुग है। इस युग के पश्चात जो युग आया उसका नाम त्रेता पड़ा। सत् की एक टांग टूटी और एक टांग केबदले में चित् की एक टॉग जुड़ी। चित कहते हैं बुद्धि को। बुद्धि आई चिन्ता उत्पन्न हुई, क्योंकि चिन्ता की उत्पति बुद्धि से ही होती है। अब विष्णु ने एक नया रूप धारण किया। छोटे बच्चे के रूप में जिसे वामन कहते हैं, फिर इनमें समझ बूझ आई और मानवीय चोले में अपना प्रकाट्य किया, जिसका नाम परशुराम हुआ। विष्णु ने अपना यह रूप देखा और प्रसन्न हुये। कहने लगे कि जो बालक पढ़ना, लिखना और ऐसे काम में लगा रहता है, प्रसन्न चित्त और शक्तिशाली होता है। ब्रह्मचर्य युग का दूसरा मानवीय रूप है। यह युग भी बीत गया ब्रह्मचर्य समाप्त हुआ। विष्णु राम के रूप में प्रगट हुये। मानवीय चोले की बहुत सुन्दर, श्रेष्ठ आकृति बनी। मधुर वाणी और शब्द से प्रसंग द्वारा सभ्यता से उत्पन्न होकर संसार को दिखा दिया कि गृहस्थ आश्रम की मर्यादा कैसी होती है। माता पिताके साथ कैसा व्यवहार होना चाहिये। शत्रु के साथ कैसा व्यवहार होना चाहिये। राज काज के कार्यों में किस प्रकार का? यह विष्णु का मर्यादा पूर्ण जीवन था। इसी लिये राजा रामचन्द्र जी को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया है। इनका शत्रु रावण है। जो रज अर्थात् रजोगुण है, अहंकार है, रजो गुण तथा अहंकार को जो प्राणी जीत ले, केवल वही ध्यान, धर्म की मर्यादा को स्थित रख सकता है। दूसरे से असम्भव है। त्रेता युग समाप्त हुआ। उसके तीन अवतार हैं। इसमें ध्यान

की एक टाँग टूट जाती है। और यह कमी यज्ञ से पूरी हो जाती है। दो युग समाप्त हुये। त्रेता में तीन टाँगें सत् की और एक टांग चित्त की थी। त्रेता के अर्थ रक्षा या सुरक्षा के हैं सत-युग के चारों अवतारों में अपनी निजी रक्षा या सुरक्षा का विचार किसी को नहीं होता। सुरक्षा का विचार केवल बुद्धि के आने से होता है। इसलिये इसका नाम त्रेतायुग रक्खा गया।

द्वापर आया। ध्यान की दो टांगें टूटीं, चित्त शक्ति की दो टांगें जुड़ीं। सत् और चित्त समान हुये। संघर्ष अधिक बढ़ा। इसी कारण इसके केवल दो अवतार कृष्ण और बुद्ध हुये। यह बुद्धि युग है। इस युग में मानव की बुद्धी तीव्र होती है। नाना प्रकार के आविष्कार होते हैं। विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक अन्वेषण होते हैं। इस बुद्धि के युग में कैसे जीवन बिताना चाहिये इसका उदाहरण कृष्ण और बुद्ध के जीवन में मिलता है। अब कलियुग आया। संस्कृत में कल गिनने को कहते हैं। इसमें सत् की टांगें टूट जाती हैं। केवल एक रह जाती है। भावना स्वार्थ का रूप ग्रहण कर लेती है, यही स्वार्थ इस कलयुग का महापाप है। बुद्धि सबको स्वार्थी बना देती है। जिसे देखो अपने स्वार्थ के लिये अन्याय अनर्थ, अत्याचार करता है बेईमानी ४२० करता है। चूँकि सत् का चोथाई भाग ही इसमें शेष रह जाता है। इसलिये चारों ओर पाप ही पाप होने लग जाता है। जिस ओर देखो कष्ट, क्लेश, आपत्ति, विपत्ति बढ़ी हुई, देश २ का शत्रु, पड़ोसी २ का शत्रु, भाई २ का, स्त्री पुरुष में अनबन पिता-पुत्र में शत्रुता। ऐसी दशा में अब ध्यान, धर्म की तीन टागों की कमी की पूर्ति कैसे हो? विष्णु कलकी अवतार धारण करेंगे। इनका शत्रु कालिंजरेत (जरा बुढ़ापा) है यह उसे मारेंगे। नाम का धर्म और विधि सिखायेंगे। संसार की काया पलट जायेगी। नाम का प्रताप दशा बदल देगा। और

विष्णु उसे देखकर प्रसन्न होंगे। फिर नवीन का [illegible] राज्य आ जायेगा। सतयुग का धर्म ज्ञान है। त्रेता का धर्म यज्ञ है। द्वापर का धर्म मूर्ति पूजा है। कलयुग का धर्म नाम है।

कलि केवल इक नाम आधारा। श्रुति पुराण संत मत सारा॥

कल युग में केवल नाम की महिमा है। नाम लो और प्रसन्न रहोगे। भाव से लो, कुभाव से लो, विश्वास से लो, अविश्वास से लो। दुख दर्द दूर होंगे।

कष्ट-क्लेश काफ़ूर होंगे और प्रत्येक नाम लेने वाले को सतयुग का हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता की दशा इसी जीवन में प्राप्त होगी। हमारी समझ में तो मनुष्य ही पूर्ण है। उसी के रूप में यह दस अवतार होते हैं।

इस प्रकार विष्णु ने मानव की उत्पत्ति और उसके अपूर्व महत्व का दृश्य अपने अवतार के उदाहरण से दिखाया। इसमें तनिक भी अन्तर नहीं आने का। जो वास्तविकता है वह है। सत्यता मन पर प्रभाव किये बिना नहीं रहती। अवतार दस हैं, गिनती भी दस हैं, इन्द्रियाँ भी दस हैं। लोक लोकान्तर भी दस हैं। और इन सबका भार अंकगणित की नींव पर है। जैसे धन, ऋण, गुणा, भाग, दस २ दशमलव पर है।

नाम सुमिर प्यारे भाई नाम से भलाई॥ टेक॥
नाम काम, क्रोध मारे, नाम कष्ट विपति टारे।
नाम पतित जीव तारे, नाम है सुखदाई॥ नाम सुमिर
नाम ज्ञान नाम ध्यान, नाम भक्ति मुक्ति खान।
नाम शक्ति है महान, सुमिर लौ लगाई॥ नाम सुमिर
तीरथ व्रत तप को छोड़, भरम मोह नाता तोड़।
चित को नाम से ले जोड़, सहज नाम गाई॥ नाम सुमिर
भाव हो चाहे कुभाव, नाम ही से मन लगाव।
यही सच्चा है उपाव, काम ले बनाई॥ नाम सुमिर

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

आँख, कान, होंठ, बन्द, नाम सुमिर मेंट द्वन्द।
काट काल कर्म फन्द, सत संगत जाई ॥ नाम सुमिर
नाम का समाज साज, नाम करे पूरा काज।
नाम सुमिर सुमिर आज, क्या है कठिनाई ॥ नाम सुमिर
राधा स्वामी नाम ज्ञान, नाम शब्द और प्रमान।
अन्तर भज घट में आन, बिगड़ी लै बनाई ॥ नाम सुमिर

समय के संत सतगुरु। (लेखक—परमदयाल जी)॥

अब मैं नाम शरण में आया।
मैं अजान अज्ञान की मूरत मान मोह लिपटाया ॥ टेक ॥
बुद्धि विवेक समझ नहीं मुझ में, मन भरमा भरमाया।
बाल जान अनजान समझ कर, दीजै पद की छाया ॥
दुखी अधीन दीन चित व्याकुल, जान न आप न पराया।
भूल चूक अपराध मेंट कर, कीजै करुणा दाया ॥
त्राहि त्राहि प्रभु रक्षा कीजै, करम ने बहुत सताया।
अब नहीं सहन की शक्ति स्वामी, चित है अधिक घबराया ॥
मुझे तो अपनी समझ न आई, क्या अपराध कमाया।
शरण में आया शरणागत हो, भटका धोखा खाया ॥
राधास्वामी परम दयाला, अब नहीं व्यापै माया।

ऐ संसार के भक्तो, साधुओ, योगियो, ज्ञानियो! तुम संभवतः मुझ पर मेरे भाव को न समझ कर दोषारोपण करोगे कि मैंने अपने आपको समय का संत सतगुरु कहा है। मैंने समस्त जीवन इस मालिक, परम तत्व, सर्वाधार के प्रेम और भक्ति में बिताया है। मेरे जीवन के अनुभव ने चूँकि मुझे इस परिणाम पर पहुंचाया, कि जो कुछ भी मैंने किया वह सब माया की पूजा थी। अर्थात् अपने मन के अन्तर से

अपने विश्वास या संस्कार के अनुसार उस मालिक का रूप बनाया। उसकी पूजा बाहर भी और भीतर भी की। चूँकि आचार्य पदवी पर आने से जैसा कि मैं कहता रहता हूं कि अन्य सज्जन जो मुझको या मेरे रूप को कुछ मान कर बाहर में और भीतर में पूजते हैं, मैं तो होता नहीं। इसलिये मुझको यह विश्वास हो गया कि यह सब माया की पूजा करते हैं। वास्तविक मालिक जो हमारी ज़ात है, वह राधास्वामी मत की शिक्षा के अनुसार राधा स्वामी दयाल, परम पद है, जो समस्त सृष्टि, रचना, ब्रह्मांडों का आधार है। हिन्दू धर्म के अनुसार वह परम तत्व, सत् और कूटस्थ है। मुसलमानों के अनुसार वह लायला, सर्वश्रेष्ठ है और अकबर है। मुझको ज्ञान तो हो गया। किन्तु इस शरीर, मन और आत्मा में रहती हुई मेरी सुरत अभी तक इस रूप, रंग, रेखा, दृश्य और विचारों से सदैव के लिये निकल नहीं सकती है, किन्तु फँसती नहीं। क्यों ? मैं नहीं जानता। अपनी सुरत से उस सर्वाधार, राधा स्वामी दयाल या अकाल पुरुष की ओर खिंचती रहती है। इस कारण इस उपरोक्त शब्द ने जो आज सत्संग में पढ़ा गया मेरी सुरत को अति प्राभावित किया। चलता आ रहा हूँ। चूँकि मुझे दातादयाल जो के शुद्ध स्वरूप ने निबल, अबल, अज्ञानी, जीवों और जगत कल्याण के लिये कार्य करने का आदेश दिया था। इसलिये मैंने जो समझा वह कहा। उस मालिक के नाम पर अनेक धर्म, पंथ, सम्प्रदाय, कर्म, भक्ति, योग-युक्ति ज्ञान आदि हैं। मेरी समझ में यह मालिक वह है जहां कोई रूप, रंग, रेखा, माया आदि नहीं रहते। हिन्दु तर्क शास्त्र के अनुसार वह मायातीत है। राधास्वामी मत वाले केवल बाह्य गुरु की पूजा या उसके ध्यान तक ही अपने आप को सीमित रखते हैं। यद्यपि हुज़ुर महाराज ने अपने

प्रेम पत्रों में स्पष्ट लिखा है कि वह राधास्वामी दयाल, मालिके कुल, ज़ात आधार सबके हैं। और बाह्य सतगुरु जीव को वहां तक पहुँचाने में सहायक होते हैं। इस समय जितने भी संत मत के अनुयायी हैं वास्तविकता से अनभिज्ञ होकर अपनी दृष्टि को मुख्य डेरों और विशेष २ पुरुष तक ही सीमित रखते हैं। इसमें दो हानि हैं। प्रथम तो यह कि वह अपनी ज़ात से नहीं मिल सकते। द्वितीय यह कि विभिन्न गद्दियों का परस्पर मत भेद रहता है। इसलिये मैंने निबल, अबल और अजानियों के लिये कि वह बेचारे भ्रम में न आयें, भटका न खायें और जगत कल्याण के विचार से, इस सत्यता को व्यक्त करने का साहस किया है। जिससे कि मानव जाति धार्मिक रूप से जो प्रथक हुई-हुई है, सचाई बता जाऊँ। ऐ संसार के भोले भाले प्राणियो! जब मैं दूसरों जैसी बुद्धि रखता था तो मेरी भी यही दशा थी। जीवन के अनभुव ने जहां पहुंचाया उसके आधार पर वड़े उच्च स्वरों से कहता हूँ कि तुम्हारा कल्याण तथा उद्धार किसी बाह्य पुरुष ने फूँक मार कर नहीं करना है। तुम भोले भाले जीव हो। मैं भी कभी ऐसा ही था। मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा। इसलिये कहे जाता हूँ कि ऐ मानव! अपने हृयय को मन को शुद्ध कर! वह सच्चा मालिक, वह ज़ात, तुम से प्रथक नहीं है। तू उसमें इस प्रकार रहता है कि जैसे कि मछली पानी में रहती है। बाह्य गुरू क्या करता है? वही जो दाता ने मेरे साथ किया। मुझे समझ नहीं आती थी। आचार्य पदवी देकर मेरी आँखें खोल दीं। आँखें तो इन सब गुरुओं की, जो नाम दान देते हैं खुली हुई होनी चाहियें। किन्तु यह महात्मा जन आप लोगों को सचाई और वास्तविकता नहीं बताते। और संसार वालों को भी वास्तविकता की आवश्यकता नहीं है। वह सांसारिक

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

इच्छाओं और आशाओं में फँसकर जीवन नष्ट कर रहे हैं ?

तो फिर क्या करना है सच्चे बन कर अपने घर में बैठ कर उस मालिक को जो सबसे उच्च आधार है, उसे अपने को अर्पण करते रहो। तुम देखोगे इस क्रिया और साधन से तुम्हारा मन शुद्ध, पवित्र हो जायगा तुम्हारे अन्तर प्रकाश और शब्द स्वयं ही गूँजेगा क्योंकि वह तुम्हारा अपना ही नाम है और अपना ही प्रकाश है जहाँ मैंने अपने आपको समय का सन्त सतगुरु कहा है वह इस इसलिये नहीं कि तुम मुझे पूजो, नत मस्तक हो। केवल अपने जैसे उनमत्तों के लिये, जो मेरी भाँति उस मालिक के खोजी हैं, उनको कहे जाता हूँ कि यह सच्चा मार्ग है। मुझे सुख-शांति इस मार्ग चलने से मिली है।

आजा गोपाल आजा। आजा गले लगजा।
मुझे मोहिनी रूप दिखाजा॥

तुझ बिन मुझको चैन न आवे। पीर विरह की अधिक सतावे॥
रह रह कर जिया हिया मुरझावे। जलती आग बुझा जा॥टेक॥
दिन में सोच तेरा है पल पल। रात को मन में रहती हलचल॥
आजा प्रेम डगर में चल चल। सुख का भेद बताजा॥ टेक॥
तड़पूँ तरसूँ प्यारे कारन। बिलखूँ तलफूँ दमदम छिनछिन॥
व्याप रही चित चिंता डायन। उसका फंद कटाजा॥ टेक॥
मन मंदिर मेरा पड़ा है सूना। विपति कलेश रहे दिन दूना॥
तू क्यों हुआ बेदर्दी ऊना। घट के घर को बसा जा॥ टेक॥
जोत में जोत जले दिन राती। अन्धकार की मिटे उत्पाती॥
तेरी छबि अति मुझको भाती। सूरज चन्द्र लजा जा॥ टेक॥
अँखियन बहै नीर की धारा। जग में मेरा कोई न सहारा।
तू ही सांचा है रखवारा। काल से अब तो बचाजा॥ टेक॥
योग विराग कछू नहीं सूझे। ज्ञान ध्यान गम नेक न बूझे॥
माया कर्म से नित ही जूझे। भव दुख आय हटाजा॥ टेक॥

सतगुरु रूप का दर्शन प्यारा। गुरु मूर्ति है सार का सारा ।।
मैं हूँ प्रेम प्यास का मारा। अमृत बूंद पिला जा ।। टेक ।।
तू है दाता तू हितकारी। तू समरथ तू जगदा धारी ।।
मैं तो तेरे नाम पै बारी। बिगड़ी मेरी बनाजा।। टेक ।।

यज्ञोपवीत संस्कार । ले०–परम दयाल जी महाराज ।।

मुझे पं० नरायन दास ने अपने पुत्र और भतीजे के यज्ञोपवीत संस्कार पर उसको यज्ञोपवीत धारण करवाने को कहा। यह उनका विश्वास है। प्रत्येक माता पिता अपनी संतान को श्रेष्ठ देखना चाहता है, चूँकि वह मेरा आदर मान करते हैं, इसलिए उन्होंने ऐसा कहा।

मैं स्वयं सोचता हूँ कि यज्ञोपवतीत संस्कार क्या है? भारत वर्ष के ऋषि और संत जन एक अस्तित्व को मानते हैं। उनकी विचार धारा यह है कि अस्तित्व है इसी का प्राकट्य प्रत्येक वस्तु, लोक लोकान्तर में। मैं अन्ध विश्वास से ऐसा नहीं मानता। समस्त जीवन उस मालिक की खोज में बिताया। अभ्यास करता हुआ सब कुछ जब छोड़ जाता है तो फिर भी कोई एक तत्व शेष रह जाता है। `उस तत्व का नाश नहीं होता। या यों समझ लो कि मेरा अपना नाश नहीं होता। इसलिए मैं भी इन ऋषियों और सन्तों से सहमत हूं, यह यज्ञोपवीत संस्कार बालक को उस समय दिया जाना चाहिए। जब उसकी बुद्धि शक्ति मनन शक्ति बलवान हो जाये। उसमें समझने सोचने की योग्यता हो। ऐसे ही व्यक्तियों को जिनमें सोच समझ या पदार्थ उत्पन्न हो जाता है। उनकी सोच समझ की श्रेणियों के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, कहा जाता है। जिनमें सोच समझ का पदार्थ नहीं केवल पशुओं जैसी भावुकता विद्यमान है, उनको शूद्र कहते हैं, जिनकी

बुद्धि केवल खाने, पीने आदि तक ही सीमित है। उनके लिये यह संसार नहीं है।

यह बच्चे अभी छोटे हैं। कुल की मर्यादा और रीति के अनुसार, हम सब कार्य करते हैं। इसलिये मैं यह लेख लिखवा रहा हूं कि जब बच्चे बड़े हों यह मेरे इस लेख को पढ़ें। और मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह बच्चे समय पर इस यज्ञोपवीत के रहस्य समझ कर अपना सांसारिक औ आध्यात्मक जीवन को श्रेष्ठ बना सकेंगे। इसी भावना और आशा सहित मैंने इनको यज्ञोपवीत धारण करना स्वीकार किया। देखना चाहता हूँ कि मेरा संस्कार कुछ काम करेगा या नहीं। यदि इन बालकों के जीवन बदल जाँय तो नरायनदास या उसके परिवार के या और सम्बन्धी जन विश्वस करलें कि मैं एक शच्चा ब्राह्मण था वरन नहीं था।

मानव के अन्तर तीन शरीर हैं या वह तीन शरीरों का बना हुआ मैं शरीर, मन या आत्मा। इनमें या उन तीनों म एक और वस्तु है जो इन तीनों शरीरों के खेल की शाक्षी होती हैं। वह अजर, अमर और अविनाशी है। वह परम तत्व है या कुछ और उसका नाम रखलो। संत उसको सुरत कहते हैं। यह यज्ञोपवीत का संस्कार मेरी समझ में इसलिये है कि बच्चे को स्थूल शरीर, मानसिक सूक्ष्म शरीर को शुद्ध पवित्र, स्वच्छ व स्वस्थ रखने का आदेश दिया जाता है। यदि स्थूल शरीर अपवित्र रहता है स्वस्थ नहीं रहता तो जीवन दुखदाई हो जाता है। इसके लिये इस अवसर पर बच्चे को प्रति दिन स्नान, स्वच्छता, अथवा अन्य नियमों का पालन, देश, काल, कुल की मर्यादा के अनुसार आदेश दिया जाता है। और इसी प्रकार सूक्ष्म तथा मार्मिक शरीर को नियंत्रण में रखने के लिये विशेष विशेष प्रकार के नियमों का आदेश दिया जात है।

जिससे कि बच्चे का मन संयम में रहे। शरीर की तीन अवस्थायें हैं। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति। मन की भी तीन अवस्थायें हैं, मन की जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति तथा गहरी नींद। इसका दूसरा नाम भूः भुवः स्वः मः जनः और तपः हैं। इसी प्रकार उनके आगे आत्मा की तीन अवस्थायें हैं।

यज्ञोपवीत के दो अग्र होते हैं, उनके ऊपर ब्रह्म गाँठ होती है। एक-एक अग्र में तीन-तीन तारें होती हैं। बच्चे को यह संस्कार दिया जाता है कि जब तक तुमको आत्म अवस्था प्राप्त न हो तब तक शारीरिक और मानसिक शरीरों पर उन नियमों के अनुसार जो गुरु ने बताये हैं, पालन होता रहे। और यज्ञोपवीत का प्रत्येक समय गले में रहना एक प्रकार की प्रति क्षण उसका स्मरण कराना है, जिससे कि वह उलंघन न करें। उन नियमों और सिद्धान्तों को भूल न जावें। जिस प्रकार कि विवाहित युवतियों को माथे पर बिन्दी और सुहाग का सिंदूर प्रति दिन लगाने का आदेश है।

मैं प्रत्येक बच्चे को अपनी समझ के अनुसार उसकी प्रकृति के अनुकूल पृथक-पृथक बात कहूंगा। एक ही नियम सब के लिये लागू नहीं हो सकता।

साधन के लिये जिससे कि मन संयम में रहे, गायत्री मंत्र है। जिसका कि अर्थ है जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति से परे जो सावित्री रूपी सूर्य (प्रकाश) है उसको अपने अन्तर देखने का साधन करता रहे। (क्यों) ? जैसा कि मैंने पहले कहा है कि अस्तित्व है। उस अस्तित्व का प्राकट्य ब्रह्म अर्थात् प्रकाश है और वह प्रकाश, वह ब्रह्म, प्रत्येक मानव का अपना आत्मा है। इसी प्रकार प्राणायाम के मंत्र में भू : भुवः स्वः मः जनः तपः सत्यम से आगे जो सावित्री रूपी सूर्य (प्रकाश) है उसका दर्शन करना है। जब मानव शरीर की जाग्रत, स्वप्न

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

और सुषुप्ति पर नियंत्रण पा जाता है तो वह आत्मा की जागृत अवस्था में आ जाता है।

इस समय अपने ब्रह्म स्वरूप का चूंकि उसको ज्ञान हो जाता है, फिर वह शारीरिक और मानसिक चेतनताओं के जाल से निकल जाता है। तब इस यज्ञोपवीत की कोई आवश्यकता नहीं रहती। यह सन्यास है। सन्यास का अर्थ घर बार त्यगने से नहीं, केवल अपने शारीरिक और मानसिक खेलों में न फँसने का नाम सन्यास है। किन्तु केवल वह नहीं फँसता जिसको अपने सत् के परे जो प्रकाश है उसमें ठहरने का साधन नहीं है। इसलिये हमारे हिन्दू धर्म में यह यज्ञोपवीत संस्कार इसलिये है कि मानव इस संसार में रहता हुआ अपने शारीरिक और मानसिक बोध-भानों को अपने अनुकूल बना सके। और तत्पश्चात उन पर नियंत्रण पाकर अपने वास्तविक रूप जो प्रकाश और शब्द स्वरूप है, उसमें ठहर सके। इस सोपान तक जाने के लिये किसी गुरु के आदेश पर चलना अति आवश्यक है। यज्ञोपवीत डालने के पश्चात मानवीय बच्चा दूसरा जन्म धारण करता है। अर्थात प्रारम्भिक पशुवत जीवन तथा शूद्रता को बदल देने का संस्कार दिया जाता है।

मैं पंडित नरायनदास के भाव को समझकर उनको दीक्षित किये जा रहा हूं, किंतु साथ ही आशा रखता हूँ कि जैसा तुम अपने बच्चों को बनाना चाहते हो तुम्हारा अपना आचरण भी ऐसा होना चाहिये कि बच्चों के भाव, विचार यदि वह इस पथ पर चलें तो उनको साहस दिया जाये। उदाहरणतः बच्चे को कहा गया कि बच्चा सच बोलो। घरेलू जीवन है, यदि उसने कहीं सच कहा और वह माता पिता के अपने कार्य व्यवसाय में हानिकारक सिद्ध हुआ तो बच्चे का विरोध किया गया, डाँटा डपटा गया। यह क्रियात्मक रूप है। बच्चों

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

तथा उन्नति करना जहां मुझ पर है वहां अधिकतर
त्व माता पिता पर भी है। मेरा अपना जीवन समक्ष है
हा था—फ़कीर गाढ़े पसीने की जीविका उपार्जन करना।
थी। मैंने आज्ञा का पालन किया। किन्तु मुझे स्मरण
ो माता ने दस दिन तक भोजन नहीं किया था, क्योंकि
.नुचित पैसा नहीं लेता था। यह मैं इसलिए लिख रहा हूँ
कि पंडित नारायण दास जी को फ़कीरचन्द पर ही समस्त बोझ डालने का साहस न हो। मैं पुरोहिताई, पंडिताई, तो करता नहीं। मेरा मार्ग और है। केवल इनके प्रेम वश मैंने इन बच्चों के गुरु बनने का खेल खेला है।

अंतिम विनय

एक पतित जीवन फ़कीर का, रूप धार करता पुकार।
ऐ परम तत्व! दाता दयाल, तुम सारे जगत के हो आधार॥
मैं हूं कौन ? और क्या हूँ मैं ? चेतन का एक बुल बुला।
जिससे बना, उसी खोज में, जीवन दिया अपना गुज़ार॥
समझता हूँ बहुत कुछ, और कहता हूँ बहुत कुछ।
पर दरअस्ल ऐ दाता, पा न सका तेरा पार॥
जैसा बनाया तूने वैसा कराया काम, कुदरत ने मुझसे सारा।
इसलिए मुझे नहीं है, अपने काम का अहंकार॥
दौड़ दौड़ के दौड़ देखा, अन्त में गया हूं मैं हार।
सोच, समझ, विवेक, अनुभव से, हो गया अब लाचार॥
खींचले सब ज्ञान अनुभव, खींच ले बुद्धि विकार।
दे शरन अपनी तू दाता, भूलूँ मैं अब यह संसार॥
जब तक है होश जीवन में, बर माँग यह सदा।
दे अपनी ज़ाते पाक का, मुझे अपना सच्चा प्यार॥
कह नहीं सकता हूँ मैं, मैं कौन हूँ तू कौन है।
मगर तेरी हस्ती से, मैं कर सकता नहीं इनकार॥

विश्वास है मर्म तेरा, तू बनकर आया दाता दयाल
खेल खिलाया तूने ऐसा, जिससे समझा तू है आप
शरणागतम्, शरणागतम्, शरणागतम्, ऐ दाता
हर तरफ़ से हट के आया, मैं शरण में अब
भेंट हैं मन कर्म वाणी, तू ही करता पुरुष है।
मैंने न कुछ किया और न कुछ कर सका, तू ही है सब करनहार
चरणों में आकर तेरे, अब शान्ति मिली मुझे।
मौज तेरी काम तेरा, तू ही करता सारा कार॥
राधा स्वामी तुम हो सतगुरु, दो चरण का आसरा।
पाऊँ चरणों में बसेरा, और चरणों का प्यार॥

इसको सतगुरु तू जाने जो हमसे खेल खिलाया है।
हम तो कुछ भी नहीं जानें, तू ही मायातीत कहाया है॥
मौज तेरी तेरे चरणों में, ले आई खींच करके हमको।
तेरा तुझको अर्पण है, जो कुछ भी काम कराया है॥
मैं कुछ भी नहीं, तू सब कुछ है, मैं तू भी नहीं, तू मैं भी नहीं।
तू अगम अपार अगोचर है, यही समझ में मेरी आया है॥
किस मुँह से तेरी अस्तुति गाऊँ, जब मन बुद्धि से पार है तू।
मुझ में इतनी शक्ति कहाँ, यह सब कुछ तेरी दाया है॥
जो चाहे मुझ से करा ले तू, यह जीवन तेरे अर्पण है।
'विश्व प्रेमी' की पदवी दी तूने, तब प्रेम पंथ में आया है॥

शोक समाचार- ठा० गिरधर सिंह जी वरंगल निवासी की पुत्र बधू के देहावसान पर मनुष्य बनो परिवार अत्यन्त शोक प्रकट करता हुआ मालिक से प्रार्थना करता है कि वह दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे और परिवार को धैर्य।

सूचना—हमारा आगामी अंक प्रेस मालिक की चिकित्सा के कारण ५-६ दिन लेट पहुंचेगा। प्रिय पाठक गण क्षमा करें।

मुद्रक—रामस्वरूप राघव, राघव प्रिंटिंग प्रेस, अलीगढ़।

मनुष्य बनो के नियम

१—शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना, इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक, उन्नति कारक, तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापनेका अधिकार संपादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ़ साफ़ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जवाबी कार्ड आना चाहिये। वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले वह अगला अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुँचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य आ सकेगी।

९—नमूना।) आने के टिकट मिलने पर ही भेजा जा सकेगा।

१०—एक वर्ष से कम के ग्राहक नहीं बनाये जायेंगे। जो किसी भी मास से बन सकते हैं। मूल्य समय पर भेजना होगा।

११—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहियें। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

मैनेजर—मुन्शीलाल गोविल (विरव प्रेमी)

Regd. No. L. 808

... पुस्तक :—

...ना हिन्दी ॥=)

...जीवन ॥)

३-...नवधर्मप्रकाश उर्दू १॥) हिंदी॥।)

४-सन्त मत सार हिन्दी १)

५-फकीर शब्दावली ,, ॥=)

६-आत्मिक आदर्श ,, ॥)

७-राधास्वामी मत ,, ।=)

८-आकाशी रचना उ. ॥) हिंदी ॥)

९-सांई की मौज व सार बचन ॥)

१०-शब्द सार ,, ॥)

११-मनोकामना देवी ,, ।=)

१२-जीवनी दाता दयाल उर्दू २) ६)

१३-आवागमन उर्दू ॥) हिन्दी १)

१४-सांई की सदा ,, ॥)

१५-सांई के सौ ख्याल हिन्दी ॥)

१६-सचाई ,, उर्दू ।)

१७-विष्णु संहिता हिन्दी १॥)

१८-शिव संहिता ,, १॥)

१९-नाम महात्म ,, १)

२०-दयाल संहिता उर्दू ॥)

२१-सुमेरु पर्वत हिन्दी १॥

२२-दातादयाल शब्द संग्रह हिं. ॥=

२३-योगी हिन्दी)

२४-शकुन विद्या हिन्दी =)

२५-...अवतार तिरंगा

२६-परमार्थ सुधार हिन्दी ॥)

२७-विश्व शान्ति हिन्दी ।)

२८-...की बढ़ाओ हिन्दी ।)

२९-निष्कलंक अवतार हिन्दी उर्दू ॥)

३०-विश्वहितैषी उ. १॥) विश्वप्रेमी॥)

31-Key to Freedom Eng. 1/-

३२-जगत कल्याण, जगत विस्तार,

6-Message of Peace 0-10-0

7-Truth & Reality 0-6-0

8-Independence Day Messages 0-12-0

9-Real Independence 0-4-0

0-Letters of Data Dayal 0-12-0

1-Light on Anand Yog 3-0-0